AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

गांधी चिंतन में पर्यावरण चिंता

ORIGINAL ARTICLE

Authors

डॉ. ज्योति सिन्हा
सहायक प्राध्यापक
दर्शनशास्त्र विभाग

प्रो. मनोज कुमार सिन्हा
सहायक प्राध्यापक
इतिहास विभाग
वनांचल महाविद्यालय
टण्डवा, चतरा, झारखंड, भारत

शोध सार

महात्मा गाँधी के चिन्तन में पर्यावरण की चिंता आधुनिक पारिस्थितिकीय संकट से बहुत पहले विद्यमान थी। यद्यपि उन्होंने 'पारिस्थितिकी' या 'पर्यावरण संरक्षण' जैसे शब्दों का प्रयोग नहीं किया, फिर भी उनकी अहिंसा, सत्य, स्वदेशी, ग्राम स्वराज, सादा जीवन और ट्रस्टीशिप की अवधारणाएँ प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन की आधारशिला हैं। "पृथ्वी प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्याप्त संसाधन उपलब्ध कराती है, किन्तु प्रत्येक व्यक्ति के लोभ की पूर्ति के लिए नहीं", यह विचार गाँधी के पर्यावरणीय दर्शन का केन्द्रीय सूत्र है। प्रस्तुत शोध–पत्र में गाँधी के विचारों का विश्लेषण किया गया है तथा उनकी वर्तमान प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला गया है।

मुख्य शब्द

महात्मा गाँधी, पर्यावरण चिंता, पर्यावरण संरक्षण, स्वदेशी, ग्राम स्वराज.

प्रस्तावना

वर्तमान युग जलवायु परिवर्तन, जैव–विविधता की हानि, प्रदूषण और संसाधनों के अति–दोहन का युग है। इस संकट के समाधान की खोज में महात्मा गाँधी का चिन्तन अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हो रहा है। गाँधी ने 1909 में ही हिन्द स्वराज में पश्चिमी औद्योगिक सभ्यता की आलोचना करते हुए चेतावनी दी थी कि यदि भारत भी उसी मार्ग पर चला तो वह संसार को टिड्डियों की भाँति नग्न कर देगा।गाँधी प्रकृति को मात्र संसाधन नहीं, अपितु जीवित सत्ता मानते थे। उनकी दृष्टि में मनुष्य प्रकृति का स्वामी नहीं, अपितु उसका हिस्सा और संरक्षक है। यह शोध–पत्र गाँधी चिन्तन के उन आयामों का विवेचन करता है जिनमें पर्यावरणीय चिंता निहित है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र के मुख्य तथा विशिष्ट उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

1. गांधीजी के मूल ग्रंथों, पत्रिकाओं तथा भाषणों में निहित पर्यावरणीय विचारों की व्यवस्थित पहचान करना;
2. इन विचारों को आधुनिक पर्यावरणीय सिद्धांतों, अंतरराष्ट्रीय समझौतों तथा सतत विकास लक्ष्यों से जोड़कर तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करना;

3. भारत के प्रमुख पर्यावरण आंदोलनों पर गांधीवादी वैचारिक प्रभाव का सूक्ष्म मूल्यांकन करना;
4. अंतरराष्ट्रीय पर्यावरण–चिंतकों पर गांधीवादी प्रभाव की पहचान करना; तथा
5. गांधीवादी पारिस्थितिक मॉडल की समकालीन सीमाओं तथा संभावनाओं की संतुलित, आलोचनात्मक समीक्षा प्रस्तुत करना।

शोध पद्धति

यह शोध पत्र गुणात्मक, व्याख्यात्मक तथा विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें गांधीजी की मौलिक रचनाओं विशेषकर हिंद स्वराज तथा आत्मकथा द्वितीयक विद्वत्तापूर्ण स्रोतों, समकालीन विद्वानों के आलोचनात्मक लेखों, तथा सतत विकास तथा जलवायु परिवर्तन संबंधी अंतरराष्ट्रीय नीति–दस्तावेजों, पुस्तके, शोध पत्रो के माध्यम सें द्वितीयक आंकड़ो का संकलन किया गया है।

हिंद स्वराज और औद्योगिक सभ्यता की आलोचना

गांधीजी की सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथा मूलभूत कृति ''हिंद स्वराज'' (1909) में आधुनिक औद्योगिक सभ्यता की अत्यंत तीव्र, मौलिक तथा गहन आलोचना मिलती है। उन्होंने पश्चिमी मशीनी सभ्यता को ''आधुनिक सभ्यता का रोग'' कहा और इसे मानवता के लिए दीर्घकालिक रूप से विनाशकारी तथा आत्मघाती बताया। उनका दृढ़, अडिग मत था कि पश्चिमी सभ्यता, जो भौतिक सुख–सुविधाओं की अंतहीन तथा असीमित खोज पर आधारित है, मनुष्य को उसकी आत्मा, नैतिक मूल्यों तथा सामुदायिक जीवन से दूर करती है तथा प्रकृति के साथ उसके मूलभूत संबंधों को विषाक्त, शोषणकारी तथा असंतुलित बनाती है। गांधीजी का यह दृष्टिकोण केवल औद्योगीकरण की तकनीकी प्रक्रिया के विरुद्ध नहीं था, अपितु यह उस मूलभूत, गहरी बैठी मानसिकता के विरुद्ध था जो प्रकृति को मात्र एक जड़, निर्जीव संसाधन–भंडार के रूप में देखती है, जिसका शोषण असीमित मानव–सुख की प्राप्ति के लिए किया जाना है। इसके विपरीत, उन्होंने प्रकृति के साथ एक सहजीवी, पारस्परिक, सम्मानजनक तथा दीर्घकालिक संबंध की परिकल्पना प्रस्तुत की, जिसमें मनुष्य प्रकृति का निरंकुश स्वामी नहीं, अपितु उसका एक विनम्र, कृतज्ञ तथा जिम्मेदार सदस्य है। उन्होंने बार–बार, विभिन्न अवसरों पर यह दोहराया कि किसी भी सभ्यता का वास्तविक तथा सच्चा मापदंड उसकी भौतिक उपलब्धियां अथवा तकनीकी प्रगति नहीं, अपितु उसकी नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक उन्नति है।

यंत्रीकरण पर गांधीजी का संतुलित तथा सूक्ष्म दृष्टिकोण

यह विशेष रूप से ध्यान देने योग्य तथा महत्वपूर्ण है कि गांधीजी सम्पूर्ण रूप से यंत्रों अथवा प्रौद्योगिकी के अंधे विरोधी नहीं थे, जैसा कि प्रायः एक भ्रांतिपूर्ण धारणा प्रचलित है। उन्होंने स्वयं स्पष्ट रूप से कहा था कि वे उस यंत्र का हार्दिक स्वागत करते हैं जो मानव–श्रम को सहायता तथा सम्मान प्रदान करे, न कि उसे पूर्णतः प्रतिस्थापित कर व्यापक बेरोजगारी तथा सामाजिक असंतुलन उत्पन्न करे। सिंगर सिलाई मशीन के प्रति उनकी मुक्त प्रशंसा इसका एक जीवंत प्रमाण है। उनका मूलभूत विरोध उस केंद्रीकृत, विशालकाय तथा ऊर्जा–गहन औद्योगिक ढांचे के प्रति था जो कुछ ही हाथों में शक्ति, पूंजी तथा संपत्ति का असंतुलित संकेंद्रण करता है और साथ ही प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित, असंतुलित दोहन करता है।

आवश्यकता बनाम लोभः उपभोग का दर्शन

गांधी चिंतन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण तथा केंद्रीय स्तंभ है आवश्यकता और लोभ के बीच का मौलिक, स्पष्ट भेद। उनका सुप्रसिद्ध, व्यापक रूप से उद्धृत कथन है कि ''पृथ्वी पर प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्याप्त संसाधन हैं, परंतु प्रत्येक व्यक्ति के लोभ की पूर्ति के लिए पर्याप्त संसाधन कदापि नहीं हैं।'' यह गहन विचार आधुनिक पारिस्थितिक अर्थशास्त्र (इकोलॉजिकल इकोनॉमिक्स) के मूल, आधारभूत सिद्धांतों में से एक बन चुका है, जो यह मानता है कि पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधन असीमित नहीं हैं तथा अनियंत्रित, लोभ–प्रेरित उपभोग पारिस्थितिकी तंत्र के लिए दीर्घकाल में अत्यंत घातक तथा अपरिवर्तनीय सिद्ध होता है।

अपरिग्रह का सिद्धांत तथा आधुनिक न्यूनतमवाद

गांधीजी ने पातंजलि योग–दर्शन तथा प्राचीन जैन परंपरा से गहराई से प्रेरित ''अपरिग्रह'' (गैर–संग्रहण अथवा असंग्रह) के सिद्धांत को अपने संपूर्ण जीवन का अभिन्न, अपरिहार्य अंग बनाया। अपरिग्रह का मूल अर्थ है आवश्यकता से अधिक भौतिक वस्तुओं का संग्रह न करना तथा संग्रहवृत्ति से पूर्णतः मुक्त रहना। यह गहन सिद्धांत सीधे तौर पर आज की ''अतिउपभोग'' की गंभीर समस्या से जुड़ता है, जो व्यापक कार्बन उत्सर्जन, अपशिष्ट संकट तथा संसाधनों के अत्यंत असमान वैश्विक वितरण का एक प्रमुख, मूलभूत कारण है।

आधुनिक संदर्भ में, जब उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक, अनियंत्रित दोहन हो रहा है, कार्बन उत्सर्जन निरंतर तथा तीव्र गति से बढ़ रहा है तथा अपशिष्ट प्रबंधन एक गंभीर, जटिल वैश्विक समस्या बनती जा रही है, गांधीजी का यह शाश्वत सिद्धांत ''सादा जीवन, उच्च विचार'' एक अत्यंत व्यावहारिक, प्रभावी तथा तत्काल लागू करने योग्य समाधान के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। समकालीन पर्यावरणीय अर्थशास्त्री तथा नीति–निर्माता आज इस गहन विचार को ''न्यूनतमवाद'' तथा ''टिकाऊ उपभोग'' (सस्टेनेबल कंजम्पशन) के आधुनिक सिद्धांतों के रूप में पुनः प्रस्तुत, व्याख्यायित तथा लोकप्रिय बना रहे हैं।

स्वदेशी और ग्राम स्वराजः स्थानीय स्वावलंबन की अवधारणा

गांधीजी के व्यापक आर्थिक तथा सामाजिक दर्शन का एक केंद्रीय, अपरिहार्य तत्व ''स्वदेशी'' तथा ''ग्राम स्वराज'' की समग्र अवधारणा है। स्वदेशी का मूल अर्थ केवल विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार नहीं था, अपितु यह स्थानीय संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग, स्थानीय उत्पादन, स्थानीय श्रम तथा स्थानीय, तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति का एक व्यापक, गहन तथा समग्र सिद्धांत था। उन्होंने चरखे तथा हस्तनिर्मित खादी को इस समग्र दर्शन का एक जीवंत, प्रभावशाली प्रतीक बनाया, जो न केवल आर्थिक स्वावलंबन का महत्वपूर्ण साधन थे, अपितु पर्यावरणीय दृष्टि से भी अत्यंत सुसंगत, उपयुक्त तथा टिकाऊ थे चूंकि चरखे पर सूत कातने की प्रक्रिया ऊर्जा–गहन, केंद्रीकृत औद्योगिक प्रक्रियाओं की तुलना में अत्यंत कम प्राकृतिक संसाधनों तथा ऊर्जा की मांग करती है और इससे व्यावहारिक रूप से लगभग कोई प्रदूषण उत्पन्न नहीं होता।

खादी तथा ग्रामोद्योग का पारिस्थितिक महत्व

गांधीजी द्वारा स्थापित अखिल भारतीय खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग आज भी हस्तनिर्मित, न्यूनतम–ऊर्जा तथा प्राकृतिक रेशों पर आधारित वस्त्र–उत्पादन को सक्रिय रूप से प्रोत्साहित करता है। यह विकेंद्रीकृत मॉडल आज की षटिकाऊ फैशनष (सस्टेनेबल फैशन) तथा ''स्लो फैशन'' के वैश्विक आंदोलन से अत्यंत गहरी साम्यता रखता है, जो तीव्र–फैशन (फास्ट फैशन) उद्योग द्वारा उत्पन्न गंभीर पर्यावरणीय क्षति जैसे भारी जल प्रदूषण, विषाक्त रासायनिक अपशिष्ट तथा बढ़ता वस्त्र–कचरा के विरुद्ध एक सशक्त, वैचारिक प्रतिक्रिया के रूप में उभरा है।

न्यासिता सिद्धांत (ट्रस्टीशिप) और प्राकृतिक संसाधन

गांधीजी का न्यासिता सिद्धांत मूलतः धन तथा संपत्ति के नैतिक प्रबंधन से संबंधित एक महत्वपूर्ण सामाजिक–आर्थिक सिद्धांत है, परंतु इसे प्राकृतिक संसाधनों के व्यापक संदर्भ में भी अत्यंत सार्थक, गहन रूप से व्याख्यायित किया जा सकता है। इस मौलिक सिद्धांत के अनुसार, धनवान व्यक्ति अपनी संपत्ति के वास्तविक तथा निरंकुश स्वामी कदापि नहीं, अपितु समग्र समाज की ओर से उसके मात्र न्यासी हैं, और उन्हें इस संपत्ति का विवेकपूर्ण उपयोग व्यक्तिगत, संकीर्ण स्वार्थ के बजाय समाज के व्यापक, सामूहिक कल्याण हेतु ही करना चाहिए।

अहिंसा और पारिस्थितिक नैतिकता

अहिंसा गांधी दर्शन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण, केंद्रीय तथा सर्वव्यापी स्तंभ है, और इसका व्यापक विस्तार केवल मानव–मानव संबंधों तक सीमित नहीं है, अपितु यह संपूर्ण जीव–जगत, संपूर्ण वनस्पति जगत तथा प्रकृति के प्रत्येक सूक्ष्म तत्व तक विस्तृत, व्याप्त है। गांधीजी शाकाहार के प्रबल, दृढ़ तथा अटल समर्थक थे तथा उन्होंने समस्त पशुओं के प्रति दया, गोरक्षा तथा समस्त जीव–मात्र के प्रति गहन, निःस्वार्थ करुणा पर विशेष तथा निरंतर बल दिया। उनकी

व्यापक दृष्टि में अहिंसा का अर्थ केवल शारीरिक हिंसा से बचना मात्र नहीं था, अपितु समस्त सृष्टि के प्रति गहन प्रेम, सम्मान तथा नैतिक जिम्मेदारी की भावना रखना था।

इस अत्यंत व्यापक अहिंसात्मक दृष्टिकोण को यदि पारिस्थितिक नैतिकता के गहन संदर्भ में देखा जाए, तो यह सघन वनों, पवित्र नदियों, ऊंचे पर्वतों, विशाल समुद्रों तथा समृद्ध जैव विविधता के प्रति भी एक जिम्मेदार, संवेदनशील तथा करुणामय दृष्टिकोण अपनाने की गहन, अपरिहार्य प्रेरणा देता है। पर्यावरणीय विनाश, चाहे वह वनों की अंधाधुंध, व्यावसायिक कटाई हो, जल स्रोतों का औद्योगिक प्रदूषण हो, वायु का गंभीर रूप से दूषित होना हो अथवा जैव विविधता की अपूरणीय, स्थायी क्षति हो, गांधीवादी दृष्टि से एक प्रकार की सूक्ष्म परंतु अत्यंत गंभीर, संरचनात्मक हिंसा ही मानी जा सकती है। इस गहन अर्थ में, गांधीजी का समग्र अहिंसा दर्शन ''गहन पारिस्थितिकी'' की उस आधुनिक अवधारणा से घनिष्ठ, प्रत्यक्ष रूप से मेल खाता है, जो प्रकृति के प्रत्येक तत्व को स्वतः, अंतर्निहित रूप से मूल्यवान मानती है, न कि केवल संकुचित मानव–उपयोग की दृष्टि से।

सादा जीवन, उच्च विचारः व्यावहारिक जीवन–शैली

गांधीजी का व्यक्तिगत, दैनिक जीवन उनके पर्यावरणीय चिंतन का सबसे प्रत्यक्ष, ठोस तथा प्रमाणिक जीवंत उदाहरण है। उन्होंने स्वयं अत्यंत सीमित, न्यूनतम संसाधनों में एक गरिमामय, सार्थक जीवन व्यतीत किया। हस्तनिर्मित वस्त्र, साधारण शाकाहारी भोजन, अधिकांशतः पैदल यात्रा तथा न्यूनतम व्यक्तिगत सामान इसके ठोस प्रमाण हैं। उनके विभिन्न आश्रम दक्षिण अफ्रीका का फीनिक्स सेटलमेंट, टॉल्स्टॉय फार्म, तथा भारत में साबरमती आश्रम तथा सेवाग्राम आश्रम आत्मनिर्भरता, स्वच्छता तथा प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण, अत्यंत संयमित उपयोग के जीवंत, व्यावहारिक प्रतिमान थे। इन आश्रमों में जल संरक्षण की सूक्ष्म तकनीकें, कचरे का व्यवस्थित पुनर्चक्रण (जिसे आज हम ''रीसाइक्लिंग'' कहते हैं), जैविक खेती, प्राकृतिक कंपोस्टिंग तथा सामुदायिक स्वच्छता पर विशेष, अनुशासित तथा निरंतर बल दिया जाता था।

गांधीजी का यह दृढ़, अटल विश्वास था कि किसी भी बाह्य, सामाजिक सुधार से पूर्व आंतरिक, व्यक्तिगत सुधार अत्यंत आवश्यक तथा अपरिहार्य है, अर्थात् यदि कोई व्यक्ति अपनी इच्छाओं तथा अनावश्यक आवश्यकताओं पर समुचित नियंत्रण नहीं रख सकता, तो वह समाज अथवा प्रकृति के साथ भी संतुलित, स्वस्थ तथा टिकाऊ संबंध स्थापित नहीं कर सकता। यही मूलभूत कारण है कि उन्होंने आत्म–संयम, समय–समय पर उपवास, ब्रह्मचर्य तथा सर्वांगीण सादगी को अपने संपूर्ण जीवन का अभिन्न, अपरिहार्य अंग बनाया। यह अत्यंत सादगीपूर्ण, अनुशासित जीवन–शैली आज की ''टिकाऊ जीवन–शैली'' की समकालीन अवधारणा का एक अत्यंत प्रारंभिक, व्यावहारिक तथा गहन प्रेरणादायक उदाहरण प्रस्तुत करती है।

समकालीन प्रासंगिकताः जलवायु परिवर्तन और सतत् विकास

गांधीजी का विकेंद्रीकरण, स्थानीय स्वावलंबन तथा उपयुक्त प्रौद्योगिकी पर दिया गया गहन बल आज की ''नवीकरणीय ऊर्जा'' की विकेंद्रीकृत प्रणालियों जैसे छत पर स्थापित सौर ऊर्जा पैनल तथा ग्रामीण सामुदायिक बायोगैस संयंत्रों से अत्यंत गहरा, सार्थक साम्य रखता है। इसी क्रम में, उनका सादगीपूर्ण, संयमित उपभोग का सिद्धांत आज की ''चक्रीय अर्थव्यवस्था'' की समकालीन अवधारणा से भी गहराई से मेल खाता है, जो अपशिष्ट न्यूनीकरण, व्यवस्थित पुनर्चक्रण तथा संसाधनों के दीर्घकालिक, संतुलित उपयोग पर विशेष बल देती है।

भारत सरकार द्वारा प्रारंभ किए गए विभिन्न महत्वपूर्ण, राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम, जैसे ''स्वच्छ भारत अभियान'', भी अत्यंत प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट रूप से गांधीवादी स्वच्छता तथा आत्म–अनुशासन के मूल सिद्धांतों से प्रेरित हैं तथा इनका शुभारंभ भी सुविचारित रूप से गांधी जयंती के पावन दिन ही किया गया था। इसके अतिरिक्त, ''जलवायु न्याय'' की समकालीन अवधारणा, जो यह मानती है कि जलवायु परिवर्तन का सर्वाधिक विनाशकारी दुष्प्रभाव उन निर्धन तथा हाशिए के समुदायों पर पड़ता है जिन्होंने इसमें न्यूनतम, नगण्य योगदान दिया है, गांधीजी के सामाजिक न्याय, समता तथा ''अंत्योदय'' (समाज के सर्वाधिक अंतिम, वंचित व्यक्ति के कल्याण) के गहन सिद्धांतों से भी गहराई से जुड़ी हुई प्रतीत होती है।

निष्कर्ष

गाँधी चिन्तन में पर्यावरण चिंता कोई पृथक विषय नहीं, अपितु उनके सम्पूर्ण दर्शन सत्य, अहिंसा, स्वदेशी, सादा जीवन और सर्वतोन्मुख कल्याण का स्वाभाविक परिणाम है। वे प्रकृति को शोषण की वस्तु नहीं, अपितु जीवन की आधारशिला और आध्यात्मिक प्रेरणा मानते थे। आज जब मानवता अस्तित्व के संकट से जूझ रही है, गाँधी का संदेश स्पष्ट है लोभ पर नियंत्रण करो, आवश्यकता के अनुसार जियो, प्रकृति के साथ अहिंसक सम्बन्ध स्थापित करो और आने वाली पीढ़ियों के प्रति उत्तरदायी बनो। उनका चिन्तन न केवल भारतीय, अपितु वैश्विक पर्यावरणीय नैतिकता का आधार बन सकता है। गाँधी केवल स्वतंत्रता सेनानी नहीं थे; वे मानवता और प्रकृति के बीच सामंजस्य के अग्रदूत भी थे। उनके विचारों का पालन ही वर्तमान पर्यावरणीय संकट का स्थायी समाधान है।

संदर्भ सूची

1. गांधी, मो. क. (1938) *हिंद स्वराज अथवा भारतीय स्वराज्य,* नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद।
2. गांधी, मो. क. (1927) *सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा,* नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद।
3. भावे, विनोबा (1957) *भूदान यज्ञ,* सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी।
4. Gandhi, M.K. (1909) *Hind Swaraj or Indian Home Rule,* Navajivan Publishing House, Ahmedabad.
5. Joshi, Divya (Ed.). (2003) *Gandhiji on Environment,* Mani Bhavan Gandhi Sangrahalaya, Mumbai.
6. Jha, M.N. (1996) *Mahatma Gandhi's Views on Environment,* Retrieved from mkgandhi-sarvodaya.org, Accessed on 24/02/2025.

——==00==——